इकाई 4 नक्षत्र राशि एवं ग्रहों का पारस्परिक सम्बन्ध

संरचना

4.0 उद्देश्य

4.1 प्रस्तावना

4.2 होरा का स्वरूप एवं ज्योतिष शास्त्रीय सिद्धान्त का आधार

4.3 ज्योतिष शास्त्र की आवश्यकता और महत्व

4.4 नक्षत्रों का खगोलीय परिचय

4.5 ग्रह एवं राशियों का परिचय तथा स्वरुप

4.6 ग्रहों एवं राशियों का पारस्परिक सम्बन्ध

4.7 सारांश

4.8 शब्दावली

4.9 बोध प्रश्न

4.10 उपयोगी पुस्तकें

4.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन से आप :

- ज्योतिष शास्त्र की आवश्यकता का निरूपण कर सकेंगे।
- ज्योतिष शास्त्र के महत्त्व को बता सकेंगे।
- नक्षत्रों के खगोलीय परिचय दे सकेंगे।
- ग्रहों एवं राशियों के स्वरूप का वर्णन की सकेंगे।
- ग्रहों एवं राशियों के पारस्परिक सम्बन्ध की व्याख्या कर सकेंगे।

4.1 प्रस्तावना

प्रस्तावित विषय खगोल विज्ञान से सम्बन्धित है। खगोल में असंख्य पिण्ड प्रवह नामक वायु के वेग से भ्रमण कर रहे हैं। लेकिन असंख्य पिण्ड दृश्यमान सूर्य, चन्द्रमादि ग्रहों से कहीं अत्यधिक विशाल हैं परन्तु ये विशाल होते हुए भी हमारी पृथ्वी की परिधि से बाहर होने के फलस्वरूप भूवासियों एव यहाँ की वनस्पति को प्रभावित करने में असमर्थ हैं। इसलिए उन असंख्य पिण्डों का कोई प्रयोजन ज्योतिष में नहीं है किन्तु अपने प्रभाव के द्वारा वे पिण्ड जो प्रत्येक जीव–जन्तु एवं प्राणी तथा धरातल पर पनपने वाले वनस्पति हैं ऐसे चल पण्डि ग्रह कहलाते हैं। इन ग्रहों का राशियों का स्थान खगोल में कहाँ पर है, उनकी स्थिति क्या है? हम इन पिण्डों से किस प्रकार से प्रभावित होते हैं? इन ग्रहों के अलावा प्रत्येक नक्षत्र का अलग–अलग प्रभाव तथा प्रभावित होने वाले प्रत्येक जीव की बाह्य एवं आन्तरिक संरचना अलग–अलग होने का क्या कारण है? उपर्युक्त समस्त प्रश्नों का समाधान इस इकाई में प्राप्त करेंगें।

4.2 होरा का स्वरूप एवं ज्योतिष शास्त्रीय सिद्धान्त का आधार

ज्योतिष मानव जीवन में प्रतिक्षण प्रतिकार्य में लक्षित होता है। **''यत् पिण्डे तत् ब्रह्माण्डे''** की वैदिक उक्ति के अनुसार मानव समाज को प्रत्येक प्रतिक्षण यत्र–तत्र–सर्वत्र ज्योतिष का प्रत्यक्ष दिग्दर्शन होता है। ज्योतिष शास्त्र के अभाव में किसी भी क्षण, किसी भी शुभाशुभ कार्य की सम्पन्नता असम्भव होगी। ज्योतिष को वेद के प्रधान अंगों में गणना की गई है। यथा–

शब्दशास्त्रं मुखं ज्योतिषं चक्षुषी श्रोत्रमुक्क्तं निरुक्तं च कल्पःकरौ।
यातु शिक्षास्य वेदस्य सा नासिका पादपद्मद्वयं छन्द आद्यैर्बुधैः।।

प्राच्य मनीषियों ने ज्योतिर्पिण्डों के प्रभाव को बहुत पहले ही जान लिया था। मनीषियों के अथक प्रयासवश् मानव कल्याण की भावना से चराचर को प्रभावित करने वाले पिण्डों और उनके प्रभावों के परिणामात्मक शोध पूर्ण सुस्थिर विशिष्ट ज्ञान त्रिस्कन्धात्मक ज्योतिषशास्त्र के रूप में प्रकट हुआ। वस्तुतः ज्योतिष ज्ञान एक विज्ञान है। यह ज्ञान वेदों में जिस तरह अपने प्रयोजन के अधीन प्रस्तुत हुआ है, आज भी वह प्रयोजन उसी ज्ञान से पूर्ण होता दिख रहा है। ज्योतिष शास्त्र सिद्धान्तों के आधारभूत तत्वों में प्रमुख सूर्य है। सौरमण्डल या सौर परिवार का अध्ययन और प्रभावांकन ज्योतिषशास्त्र का प्रतिपाद्य है। यह शास्त्र अदृष्ट–व्याख्यान के प्रसंग में पूर्व जन्मादि का विवेचन कर लोक–परलोक में एक स्थापित सम्बन्ध को उद्घाटित करने का प्रयास करता है। आद्यन्तहीन सृष्टि के मर्म को समझना या उसका ज्ञान करना, उसके समीप पहुँचना, ज्योतिषशास्त्र का उद्देश्य है, जो गुप्त व सुप्त रहकर सृष्टि का संचालन कर रहा है। ज्योतिषशास्त्र प्रत्यक्षानुभूति कराने वाला व्यवहारशास्त्र है। भूत–वर्तमान–भविष्यत् की प्रत्यक्षानुभूति परक कथन करना इसका उद्देश्य है। ज्योतिष मूलतः अध्यात्मशास्त्र के रूप में हमारे समक्ष प्रकट होता है। यह प्राणियों की समस्या निष्कृति का मार्ग, ग्रह प्रभावों के मूल्यांकन द्वारा प्रशस्त कर पुरुषार्थ चतुष्टय (धर्म–अर्थ–काम–मोक्ष) की प्राप्ति में सहयोग प्रदान करता है। ज्योतिषशास्त्र के परिप्रेक्ष्य में यह ध्यानार्ह है कि उसके कथनों की सत्यता कोई इन्द्रजालिक चमत्कार नहीं, बल्कि निःसर्गगतः वास्तविक घटनाओं का उद्घाटन है। कथन कर्त्ता की योग्यता वश कभी कुछ कथन सत्य और कभी कुछ कथन असत्य भी हो सकते हैं। जब असत्य होता है तो उसका पुनरीक्षण आवश्यक है। ज्योतिषशास्त्रीय कथनों के रूप में किया गया फलादेश निश्चय ही वक्ता की अन्तर्ज्ञानात्मिका शक्ति से प्रभावित होता है। होरास्कन्ध को ही होराशास्त्र या जातकशास्त्रादि कहा जाता है। प्राणीमात्र के उत्पत्ति समय के आधार पर उसके जीवन के शुभाशुभ घटनाओं का वाचन करना जातकशास्त्र का प्रतिपाद्य विषय है। लेकिन यहाँ उसके होराशास्त्र नाम की सार्थकता कैसे समझी जा सकती है इसका उत्तर यह है कि– एक अहोरात्र के अन्तर्वर्ती काल में जो द्वादश राशियों का उदय द्वादश लग्न के रूप में होता है, उन्हीं लग्नों के आधार पर जातकशास्त्र प्राणी के शुभाशुभ फल का वाचन करता है। उस लग्न का अपर नाम 'होरा' है। अतः जातकशास्त्र को होराशास्त्र कहा जाता है। दूसरी बात यह भी कही जाती है कि– 'अहोरात्र' शब्द के पूर्व वर्ण (अ) तथा परवर्ण (त्र) का लोप करने से स्वतः होराशब्द निष्पन्न हो जाता है। अतः अहोरात्र अन्तर्वर्ती काल में उदित होने वाली राशियों को होरा कहा जाने लगा। 'सारावली' ग्रन्थ के द्वितीय अध्याय में इस प्रकार कहा गया है –

आद्यन्तवर्णलोपाद् होराशास्त्रं भवत्यहोरात्रात्।
तत्प्रतिबद्धश्चायं ग्रह–भगणश्चिन्तयते यस्मात्।।

वारहमिहिर ने अपने 'बृहज्जातक' के प्रथम अध्याय में अहोराल को इस प्रकार व्यक्त किया है, उसके साथ यह भी कहा है कि पूर्व जन्मार्जित कर्म के फलों को भी वह स्पष्टतया बताता है।

होरेत्यहोरात्र विकल्पमेके वांछन्ति पूर्वापरवर्णलोपात्।
कर्मार्जितं पूर्वभवे सदादि यत्तस्य पंक्तिं समभिव्यनक्ति।।

यह होराशास्त्र मनुष्यों को धनादि अर्जन करने में सहायक, विपत्तिरूप समुद्र में नौका और यात्रा के समय मन्त्री सिद्ध होता है। जैसा कि 'सारावली' में कहा गया है –

अर्थार्जने सहायः पुरुषाणामपदार्णवे पोतः।
यात्रासमये मन्त्री जातकमपहाय नास्त्यपरः।।

यह प्राणियों के पूर्व जन्मार्जित अच्छे बुरे कर्मों को प्रारब्धादि कर्मफल के रूप में प्रदान करता है। जिस प्रकार अंधकार में पड़ी वस्तु का ज्ञान दीपक के प्रकाश से सम्भव होता है। उसी प्रकार प्राणी के जीवन में आने वाले शुभ वा अशुभ काल या क्षण का ज्ञान होरा शास्त्र से होता है। जैसा लघुजातक में कहा गया है–

यदुपचितमन्यजन्मनि शुभाऽशुभं तस्य कर्मणः पक्तिम्।
व्यंजयति शास्त्रमेतत् तमसि द्रव्याणि दीप इवं

इसी प्रकार सारावली में भी कहा गया है कि प्राणी मात्र के ललाट पर विधाता ने जो कुछ शुभाशुभ सुख–दुःख लिख दिया है, उसे होराशास्त्र को जानने वाले दैवज्ञ अपने निर्मल दृष्टि से स्पष्टतः पढ़ लेते हैं। यथा–

विधात्रा लिखिता याऽसौ ललाटेऽक्षरमालिका।
दैवज्ञस्तां पठेद् व्यक्तं होरानिर्मलचक्षुषा।।

अन्यत्र शम्भुहोराप्रकाश में भी–**''वर्णावली तु लिखिता भुवि मानवाना धात्रा ललाटपटले किल् दैववित्ताम्।।**

मनुस्मृति के **''वेदोऽखिलो कर्ममूलम्'** वचनस्वरवशात् यह तो स्पष्ट ही है कि भारतीय वैदिक दर्शन में कर्मवाद अर्थात् पुनर्जन्मवाद का अपना एक विशिष्ट स्थान है। इसे इस प्रकार भी कहने में किसी प्रकार की बाधा नहीं आनी चाहिए कि **'कर्मवाद–पुनर्जन्मवाद'** वैदिकदर्शन का मूलभूत आधार है। इसके आधार पर महर्षियों और मनीषियों ने इस सिद्धान्त के प्रतिपादन में कहा है कि आत्मा ही एक मात्र कर्त्ता है अर्थात् मन–बुद्धि आदि द्वारा सम्पादित कर्म का कर्त्ता एक आत्मा ही है। अतः कहा जाता है– **'आत्मा एव कर्त्ताऽस्ति'**। अस्तु! वैदिक दर्शन के अनुसार जन्म–जन्मान्तरों में निष्पादित किए गए कर्मों की तीन श्रेणी हैं– 1.संचित, 2.प्रारब्ध, और क्रियमाण। इन तीन प्रकार के कर्मों के फलों को जानने के लिए ज्योतिषशास्त्र के प्रवर्तकों पराशर, गर्ग, जैमिनी, नारद इत्यादि ने तीन प्रविधियाँ आविष्कृत और सुविकसित की। यथा संचित कर्म फल जानने के लिए योगपद्धति, प्रारब्ध कर्म फलज्ञान के लिए दशा पद्धति और क्रियमाण कर्म फल ज्ञानार्थ गोचरपद्धति। इस प्रकार यह 'ज्योतिष (होरा) शास्त्र कुण्डली के ग्रह स्थितिवश बने ग्रहयोगों से संचित कर्म फलों का दशान्तर्दशादि से प्रारब्ध (कर्म) फलों का और गोचर (दैनन्दिनी ग्रह संचार) वश क्रियमाण कर्म फलों का विचार करता है।

संचित व प्रारब्ध कर्मों के फल को जातक अपनी वर्तमान जीवन नौका में बैठकर क्रियमाण कर्मरूपी पतवार के द्वारा संशोधन व परिवर्द्धन करते हुए उपभोग किया करते

हैं। अतएव कुण्डली से जातक के भाग्य का ज्ञान किया जाता है। सारांश में इसे इस तरह भी कहा जा सकता है कि क्रियमाण कर्मों के बल से पूर्व संचित अदृष्ट में न्यूनाधिक करने की सम्भावना भी प्राप्त होती रहती है। प्रकारान्त से इसका संकेत स्वयं भगवान करते हैं –

उद्धरेदात्मनात्मानं नात्मानमवसादयेत्।
आत्मैव ह्यात्मनो बन्धुरात्मैव रिपुरात्मनः।।

अर्थात् मनुष्य को चाहिए कि वह अपना उद्धार आप ही करे, निराश होकर वह अपनी अवन्नति स्वयं न करे, क्योंकि प्रत्येक मनुष्य अपने कर्मवश स्वयं अपना बन्धु या हितैषी या मित्र है और स्वकर्मवश ही स्वयं अपना शत्रु या नाश करने वाला है।

इस प्रकार उपरोक्त के अनुशीलन से यह मानना पड़ता है कि मनुष्य को कुण्डली के फलाफल का विचार करते हुए अपने क्रियमाण कर्म से सम्बन्धित अपने नियोजित पुरुषार्थ का यथार्थपरक अधिकतर दोहन या शोषण करना चाहिए, जो ज्योतिष के मार्गदर्शन से निश्चय ही सम्भव है।

ज्योतिषशास्त्र की आवश्यकता और महत्त्व–ज्योतिष की प्रशंसा, उसका महत्त्व व विशेषताओं के विषय में ऋषि मुनियों व आचार्यों का क्या अभिमत है, उसे प्रदर्शित किया जाता है।

नारद के अनुसार ब्रह्मा जी ने इस शास्त्र की रचना इसलिए की कि समय पर श्रौतस्मार्त–कर्म का सम्पादन सामान्य जन सविधि करने में सक्षम हो सके और उनका सब प्रकार से कल्याण भी हो। जैसे–

विनैतदखिलं श्रौतस्मार्त कर्म न सिद्धचति।
तस्माज्जगद्धितायेदं ब्रह्मणा रचितं पुरा।।

ज्योतिष काल का ज्ञापक अभिव्यन्जक शास्त्र है। काल के शुभाशुभ प्रकृति का बोधक है यह ज्योतिष। कर्म व काल का अविनाभाव सम्बन्ध है। कई भी कार्य चाहे वैदिक यज्ञ यागादि अनुष्ठान हो अथवा नित्य नैतिकि–कर्म सभी की सफलता या विफलता काल के ही अधीन है। अतः कालविधायक यह शास्त्र सभी कार्यों के अनुष्ठान में परमावश्यक है। ज्योतिष के इसी महत्त्व को रेखांकित करते हुए आस्कराचार्य कहते हैं–

'वेद' के लिए ज्योतिषशास्त्र की आवश्यकता व महत्त्व को स्पष्ट करने हेतु भास्कराचार्य की भावना को इस प्रकार प्रदर्शित किया जाता है। जैसे–

वेदास्तावद्यज्ञकर्मप्रवृत्ता यज्ञाः प्रोक्तास्ते तु कालाश्रयेण।
शास्त्रादस्मात् कालबोधो यतः स्याद् वेदांगत्वं ज्योतिषस्योक्तस्मात्।

ठसी बात को भास्कर के पूर्ववर्ती वेदा ज्योतिषकर्ता लग भी कर रहे हैं।

ययज्ञिक–कर्म के अनुष्ठान हेतु ही वेद प्रवृत्त हुए हैं। ये यागादि–कर्म काल के अधीन हैं। इस काल का ज्ञान चूंकि ज्योषि शास्त्र के द्वारा होता है इसलिए ज्योतिष वेदपुरुष का अत्यावश्यक चक्षुल्प अंग है।

वेदा हि यज्ञार्थमभिप्रवृत्ता कालानुपूर्वा विहिताश्च यज्ञाः।
तस्मादिदं कालविधानशास्त्रं यो ज्योतिषं वेद स वेद यज्ञम्।।

अर्थात् वेद जोकि यज्ञ के ही प्रवृत्त हुए हैं वो यज्ञ कानून रूप ही अभीष्ठफल देने में प्रकृत होते हैं। अतः जो व्यक्ति इस काल विधायक ज्योषि शास्त्र को जानता है वहीं निश्चय ही वेद को जाना है। इस प्रकार यहाँ आचार्य लगध ने केवल ज्योषि की आवश्यकता को इंगति कर रहे हैं अपितु उसके महत्व का भी प्रतिपादन कर रहे हैं।

वेदचक्षुः किलेदं स्मृतं ज्योतिषं मुख्यता चांगमध्येऽस्य तेनोच्यते।
संयुतोऽपीतरैः कर्णनासादिभिश्चक्षुषांगेन हीनो न किंचित्करः ।।

यह ज्योतिष वेद के नेत्र के रूप में निश्चय ही विख्यात है। इसकी प्रधानता सभी वेदाडगों में है। क्योंकि वर्णनासिका इत्यादि से युक्त होने पर भी यदि नेत्र नहीं हैं तो व्यक्ति कुछ भी करने लायक नहीं होता है।

अब ज्योतिषशास्त्र के प्रयोजन को मनुस्मृति के अनुसार इस प्रकार व्यक्त किया जाता है। जैसे–

यज्ञाध्ययन संक्रान्ति ग्रहषोडशकर्मणाम्।
प्रयोजनं च विज्ञेयं तत्तत्कालविनिर्णयम्।।

ज्योतिष शास्त्र की इसी आवश्यकता को मनु महाराज इस प्रकार अभिव्यक्त करते हुए कहते हैं कि यज्ञ अध्ययन संक्रान्ति ग्रहण इत्यादि सभी कार्यों या घटनाओं का प्रयोजन तभी पूर्ण हो सकता है जब उनके शरीर होने का स्पष्ट काल ज्ञात हो (जो ज्योतिष के द्वारा ही सम्भव है)

ज्योतिष के इसी महत्त्व को प्रशंसात्मक भावों में अभिव्यक्त करते हुए आचार्य लगध कहते हैं।–

यथा शिखा मयूराणां नागानां मणयो यथा।
तद्वद्वेदांगशास्त्राणां ज्योतिषं मूर्ध्न्यवस्थितम्।।

जैसे मोर के सिर पर कलगी सुशोभित होती है, नागों के मस्तक पर मणि सुशोभित होती है ठीक उसी प्रकार वेदाडग शास्त्रों में ज्योतिष मस्तक पर सुशोभित होती है।

ज्योतिषे ग्रहणं सारं गारुड़े विषभक्षणम्।
शैवे घटवती दीक्षा कौलवे ग्रहनिग्रहौ।।

इस प्रकार ज्योतिषशास्त्र वेद काल से मानव जाति के कल्याण की भावना से ओत–प्रोत अपने स्वरूप विस्तार करता हुआ, आज अपने विविधस्वरुपों में प्रकट होकर एक आम व्यक्ति को अपने ज्ञान से लाभ पहुंचा रहा है। ज्योतिष शास्त्र का मुख्य प्रतिपाद्य विषय वेद काल से अब तक एक मात्र 'काल' ही रहा है। लगध मुनि ने वेदांग ज्यौतिष में **'कालज्ञानं प्रवक्ष्यामि'** कहकर इस बात की पुष्टि की है।

4.4 नक्षत्रों का खगोलीय परिचय

भूमण्डलस्थ समस्थ चराचर जगत में जड–चेतन के रुप में समस्त जीव–जंतु, वनस्पति तथा प्राणियों पर जो प्रभाव दृग्गोचर होता है, वह नक्षत्रों के प्रभाव के कारण ही होता है। चूंकि आकाशस्थ नक्षत्रों का कभी क्षरण नहीं होता इसलिए महर्षियों द्वारा इनको **''नाक्षरति इति नक्षत्र''** इस प्रकार की संज्ञा से उद्बोधित किया है। यह खगोलस्थ 360^0 अंशात्मक भचक्र या राशिचक्र अथवा नक्षत्र चक्र कह देते है तो उपर्युक्त तीनों शब्द एक ही अर्थ को द्योतित करते हैं, चूंकि इसी राशिचक्र में लघुपिण्डों के समूह एवं पृथक–पृथक स्थानवश एक आकृति हमें अपने गुण– धर्मानुसार प्रभावित करती है।

इस संसार में जो भी जड अथवा चेतन अस्तित्व में है। उसका प्रभाव प्रत्येक प्राणी के ऊपर अपने–अपने स्वभावानुसार होता है। इसलिए नक्षत्रों का ही आधार हमें राशियां प्रदान करता है, और इन्हीं नक्षत्रों के संयोगवश जातक पर इनका प्रभाव पड़ता।

इसकी वैज्ञानिकता के विषय में यह कहना उचित होगा कि नक्षत्रों का हमारे जीवन में क्या अस्तित्व है। वस्तुतः इस खगोल मेंऐसे कई असंख्य पिण्ड और असंख्य नक्षत्र लघु, गति से मध्यम एवं दीर्घाकार रूप और यह परिभ्रमण उस–उस पिण्ड के आकार–प्रकारानुसार उस पिण्ड की गति मन्द, अतिमन्द, शीघ्र एवं अतिशीघ्र होती है। उदाहरण के रूप में जैसे ज्योतिष जगत में प्रत्येक ग्रह अपनी गत्यानुसार परिभ्रमण करता है। राशि चक्र में जिसमें कोई ग्रह 30^0 अंश की राशि को सवा दो दिन में घूम लेता है और कोई 13 माह में तथा कोई ग्रह 30 माह में उस राशि को घूम लेता है, ठीक इसी प्रकार से राशियों के भ्रमण में नक्षत्र पिण्डों का ही योगदान है। नक्षत्रों के योग से ही राशि का निर्माण होता है। हम यहाँ पर पिण्डो ंकी वैज्ञानिकता के विषय में चर्चा कर रहे हैं। चूँकि हम जिन–जिन पिण्डों से प्रभावित होते हैं वही पिण्ड हमें जीवन में घटित होने वाले भूत–भविष्य एवं वर्तमान को प्रभावित करते हैं। इसके लिए हमें आधार स्वरूप में भूमण्डल है। और भूमण्डलस्थ हम लोग ही आधारवश आकाशस्थ समस्त लघु–दीर्घ पिण्डों का अवलोकन एवं विश्लेषण करके उन–उन पिण्डों द्वारा प्रदत्त गुण–धर्म से प्रभावित होते हैं। उदाहरण के लिए हमारे पास प्रत्यक्ष सिद्धता है तो सूर्य और चन्द्र दो प्रत्यक्ष ग्रह हैं। जबकि अन्य ग्रहों को देखने हेतु हमें दूरदर्शी यन्त्र की आवश्यकता होती है। आकाश में जब सूर्योदय होता है तो स्वतः ही हम अपनी अपनी दैनिक गतिविधियों में क्रियाकलापों में ही संलग्न हो जाते हैं। और सूर्य के उदय मात्र तेज के द्वारा हमारे शरीर में रक्त का संचार स्वतः ही बढ़ जाता है। और जिसके कारण हम अपने अपने क्रियाकलापों में संलग्न हो जाते हैं। और मानव तो मानव यहाँ तक कि समस्त जीव–जन्तु, जड़–चेतन स्वयं सूर्योदय के साथ ही दैनिक गतिविधियों में रत हो जाते है। और यहाँ तक कि मानव की अपेक्षा जीव–जन्तु, पशु–पक्षी कहीं अधिक प्रभाववश अपने–अपने दैनिक कार्यों में संलग्न हो जाते हैं। ठीक इसी प्रकार से सूर्यास्त के उपरान्त समस्त जड़–चेतन जीव–जन्तु, पशु–पक्षी अपने दैनिक गतिविधियों को संचालित करने के उपरान्त विश्राम या शान्ति हेतु अपने गन्तव्य स्थान की ओर परिवर्तित होकर रात्रि के कार्यों में संलग्न हो जाते हैं। चूँकि चन्द्रमा रात्रि का द्योतक है शान्ति का कारक है। इसलिए रात्रि में समस्त भूमिवासी शान्त चित्त होकर विश्राम करते है। और यही चन्द्रमा उड्डुपति के नाम से प्रसिद्ध है। अर्थात् नक्षत्रपति है, नक्षत्रों का चन्द्रमा कारक है। अश्वनी, भरणी आदि कुल 27 नक्षत्र हैं जिनका पूर्व में तो उल्लेख हो चुका है। 27 नक्षत्रों के 27 देवता हैं। उन्हीं नक्षत्रों के गुण–दोषानुसार तथा उनके देवानुसार हमारे शरीर में सकारात्मकता एवं नकारात्मकता का संचार होता है।

4.5 ग्रह एवं राशियों का परिचय तथा स्वरूप

ग्रहों के विषय में सामान्य व्यवहार में नवग्रहों का भौतिक संसार में उल्लेख प्राप्त होता है। जबकि केवल सात ग्रहो ंके ही आकाश में पिण्ड स्थित हैं। उन्हीं सात ग्रहों के द्वारा समस्त प्राणी जगत प्रभावित होता है।

सूर्यग्रह का स्वरूप– सूर्य ग्रहों में राजा एवं दिवस्कर, अत्यन्त तेजयुक्त होने के कारण भास्कर, सृष्टि के आरम्भ में आकाशस्थ प्रथम ग्रह होने पर आदित्य इत्यादि विभिन्न नामों से जाना जाने वाला एवं प्रत्येक मास में अलग–अलग नामों से जाना जाने वाला बारह मासों के अनुसार ग्रह है। सूर्य की 12 कोटियां (भेद) अथवा 12 नाम भेद हैं।बारह प्रकार के सूर्यों का होना, समस्त जड़–चेतन में चेतनता का द्योतक, वनस्पति,

औषधियों एवं पुष्पादि का द्योतक, आत्मा का कारक, हड्डियों का अधिपति, पिता का नेतृत्त्व कर्त्ता, कर्म स्थान का कारक ग्रह है। सूर्य की दृष्टि मधु के समान पीले वर्ण वाली, चौकोर शरीर, पित्त प्रकृति और कम केशों से युक्त सूर्य ग्रह है। भौतिक जगत का नियन्ता, पिता का कारक, ग्रहों के राजा होने के कारण राजकार्यों का द्योतक, समस्त भूमण्डलस्थ चराचर जड़–चेतन का नियन्ता ग्रह ऐसे जातक जो सूर्य से प्रभावित होते हैं। पित्त की अधिकता उनमें रहती है।

चन्द्रमा ग्रह स्वरूप– चन्द्रमा को स्त्रीकारक ग्रह, स्त्रियों का नेतृत्त्वकर्त्ता, वनस्पतियों का नियन्ता, जलचर राशि का अधिपति, कफ प्रकृति युक्त, अत्यन्त मृदु स्वभाव युक्त, बुद्धिमान् ग्रह है। भौतिक जगत में चन्द्रमा से प्रभावित जातक मध्यम कद–काठी वाले, कफ के रोगी, जैसे कोरोना आदि। लेकिन ऐसे जातक बुद्धि और विवेक से कार्य करते हैं। और सामाजिक जीवन में परस्पर एकता प्रेम सद्भाव को बढावा देते हैं।

सूर्य और चन्द्रमा को छोड़कर भौमादि पाँच तारा ग्रह कहलाते हैं। चूँकि ये पाँचों ग्रह स्वयं के प्रकाश से प्रकाशित न होकर सूर्य के प्रकाश से प्रकाशित होकर प्रतिबिम्बित प्रकाश के द्वारा समस्त प्राणियों को प्रभावित करते हैं। इसलिए इनको पंच तारा ग्रह कहा गया है। इनका स्वयं का तेज न होने के फलस्वरूप इनको प्रभावहीन कहना अनुचित होगा। इनका अपना भी अस्तित्व है परन्तु यह अस्तित्व तब प्रभावित होता है जब अमुक ग्रह सूर्य के सानिध्य में आ जाता है। जैसे मंगल सूर्य के सान्निध्य में आने पर अर्थात् अस्त अवस्था सम्प्रात होने पर भौम द्वारा शरीर में रुधिर एवं उष्णता की न्यूनता होती है। उष्णता की न्यूनता वशात् शरीर में हलचल का न होना आलस्य आना शरीर में रक्तप्रवाह वेग में अवरोध उत्पन्न स्वाभाविक है। इसलिए भले ही वह ग्रह प्रतिबिम्बित प्रकाश का उपयोग धरातलस्थ जनमानस के लिए होता हो परन्तु निस्तेज होने पर रक्त प्रवाह में अवरोध उत्पन्न होने पर ब्लडप्रैसर का न्यून होना और हृदय के लिए रक्त का संचार न पहुँच पाना मानव देह को त्यागने की स्थिति में खड़ा कर देता है।

बुध ग्रह का स्वरूप– बुध ग्रह भी पंच तारा ग्रहों में अहम् स्थान रखता है। जैसे बुध के द्वारा प्रदत्त ऊर्जा के संचारवश हम वाणी की कोमलता, सरसता, काव्य लेखन के लिए उत्प्रेरित करना, प्रशासनिक दक्षता, आहार–विहार, मनोविनोद होना, पित्त, वात, कफ का कारक ग्रह जब अपने तेज से तेजोमय करता हुआ उपरोक्त सम्पूर्ण विषयों से परिपूर्ण करता है। और जब इनकी स्थिति निस्तेज अवस्था में रहती है तो समस्त त्रिदोषों से सम्बन्धित वात, पित्त, कफात्मक रोगों का शरीर घर कर लेता है। और शनैः शनैः विभिन्न रोगों के कारण हम कुछ भी कर पाने में समर्थ नहीं हो पाते हैं।

गुरु ग्रह का स्वरूप– गुरु आकाशस्थ आकार–प्रकार में बृहद् पिण्ड रूपी है। गुरुत्वाकर्षण की सर्वाधिक क्षमता युक्त, आकाशस्थ दृष्टि वाला यह ग्रह पीत नेत्रयुक्त है। अत्यधिक बुद्धियुक्त अथवा श्रेष्ठ बुद्धियुक्त, कफ प्रकृतियुक्त ग्रह है आध्यात्मिकता का द्योतक, आचार्यत्व का अधिपति, धर्म–कर्म विद्या, अध्ययन, अध्यापन, यज्ञ कर्मकाण्ड, का अधिपति ग्रह है।

शुक्र ग्रह का स्वरूप– भृगुपुत्र अथवा भार्गव या शुक्र ग्रह कई नामों से युक्त ग्रह, भौतिक सुख, सम्पदा का कारक ग्रह, आधुनिक समस्त मूलभूत भौतिकता का द्योतक ग्रह, अत्यन्त कोमल शरीर को धारण किए हुए सुन्दर नेत्रधारी, वक्र दृष्टि युक्त आकाशस्थ ऊपरी भाग का दृष्टा, गौरवर्णीय, कफ और वायु का कारक ग्रह है। लोक में समस्त भूमि, भवन, वाहन, सौन्दर्यप्रसादन, आधुनिक समस्त सुख–सुविधाओं का द्योतक ग्रह है। और भौतिक जीवन में विश्वास रखने वाला एवं नित नए भौतिकता के

कारक समस्त द्रव्यों का औषधियों का कामुकता का एवं परस्पर प्रेम का द्योतक ग्रह है।

शनि ग्रह का स्वरूप–शनैः शनैः चलति इति शनि अर्थात् मन्द गति से चलने वाला ग्रह आकाशस्थ ग्रहों के पिण्डों में भूमण्डलस्थलीय से सबसे दूर और सबसे बड़ा ग्रह है। समस्त ग्रहों में सबसे बड़ी कक्षा युक्त होने के कारण सबसे अधिक समय लेता है। इसलिए शनि मन्दादि संज्ञाओं से जाना जाता है। इसलिए धीरे–धीरे गमनवशात् आलसी या आलस्य युक्त गुण से परिपूर्ण, कुछ पीलापन युक्त आँखों वाला, पतला, सिकुड़ा हुआ शरीर एवं लम्बा है। भौतिक जगत में नौकर, न्याय एवं दुःख का कारक ग्रह, पारस्परिक सम्बन्धों का ज्ञानप्रदाता, स्थूलता लिए हुए, अर्थात् मोटे–मोटे केशों वाला मैला कुचैला, एवं भीख मँगवाने तक का द्योतक ग्रह है। अपनी ढैय्या, साढ़ेसाती में शुभता की स्थिति में समस्त औद्योगिक इकाईयों, कैमिकल एवं न्यायालय का अधिपति प्रदाता ग्रह है। यथा आचार्य वराहमिहिर के अनुसार–

मधुपिंगलदृक्चतुरस्रतनुः पित्तप्रकृतिस्सविताल्पकचः।
तनुर्वृततनुर्बहुवातकफः प्राज्ञाश्च राशि मृदुवाक्शुभदृक्कायः।।
क्रूरदृक्तरणमूर्तिरुदारः पैत्रिकस्सुचपलः कृषमध्यः।
श्लिष्टवाक् सतत् हास्यरुचिर्ज्ञः पित्तमारुतकफप्रकृतिश्च।।
बृहत्तनुः पिंगलमूर्द्धजेक्षणो बृहस्पतिः श्रेष्ठमतिः कफात्मकः।
भृगुस्सुखी कान्तवपुसुलोचनः कफानिलात्मासितवक्रमूर्द्धजः।।
मन्दोऽलसः कपिलदृक्कृशदीर्घगात्रः स्थूलद्विजः पुरुषरोमकचोऽनिलात्मा।
स्नाय्वस्थ्यसृक्त्वगथ शुक्रवसे च मज्जा मन्दाक्रचन्द्रबुधशुक्रसुरेज्यभौमाः।।

राशियों का स्वरूप–

मेष

मेष का अर्थ है मेढा। इस राशि के तारों को मिलाकर यदि काल्पनिक रेखाएँ खींची जाए तो मेढे का रूप बनता है। इसलिए इसका नाम मेष है। अंग्रेजी में इसे (।त्पै) या (त।ड) कहते हैं। यह 0^0 अंश से 30^0 अंश तक है। अश्विनी नक्षत्र के चार चरण, भरणी के चार और कृत्तिका के प्रथम चरण से मिलकर यह राशि बनती है। इसके अज, आद्य, विश्व, तुम्बूर भी नाम है। यह विषम, उग्र, दिवाबली, स्थान–गिरिभू, दिशा पूर्व, क्रान्ति रुक्ष, क्षत्रिय जाति, पृष्ठोदयी, पुरुष, चर, दृढ, ह्रस्व, पशु, शुष्क अग्नि–तत्त्व, चतुष्पद, लाल वर्ण, उष्ण, पित्त प्रधान, अतिशब्द वाली राशि है। यह राशि कालपुरुष का मस्तिष्क है। इस राशि का स्वामी मंगल है।

वृष– वृष का अर्थ है बैल या सांड। अंग्रेजी में इस (ज।न्त्नै) या (ज्ञ्म ठन्त्स्) कहते हैं। इसका विस्तार 30^0 अंश से 60^0 अंश तक है। कृत्तिका के तीन चरण, रोहिणी के चार चरण और मृगशिरा के दो चरण मिलकर यह राशि बनी है। इसे उक्ष, गो, गोकुल, द्वितीय और ताबुक नाम से भी जानते हैं। यह सम, सौम्य, रात्रिबली, स्थान–समभू, दक्षिण दिशा की स्वामिनी, कान्ति रुक्ष, वैश्य जाति, पृष्ठोदयी, स्त्री, स्थिर, ह्रस्व, शुष्क, पृथ्वी तत्त्व, चतुष्पाद, श्वेत रंग, शीत गुण, वायु प्रधान, अतिशब्द वाली राशि है। यह राशि काल पुरुष का मुख है। इसका स्वामी शुक्र है।

मिथुन– मिथुन का अर्थ है। जोड़ा(स्त्री–पुरुष)। इसे अंग्रेजी में (ळम्डप्छप्) या (ज्ञ्म ज्ॅप्छै) कहते हैं। इसका विस्तार 60^0 अंश से 90^0 अंश तक है। मृगशिरा के दो चरण, आर्द्रा के चार और पुनर्वसु के तीन चरण मिलकर यह राशि बनी है। इसके अन्य नाम युग, नृयुग्म, द्वन्द्व, यम, तृतीय और जितुम हैं। यह विषम, उग्र, दिवाबली, स्थान–वन

भू, पश्चिम दिशा की स्वामिनी, उत्तमकान्ति, शूद्र जाति, शीर्षोदयी, पुरुष, द्विस्वभाव, मृदु, सम, नर राशि, शुष्क, वायु तत्त्व, द्विपद, हरा रंग, ऊष्ण गुण, सम धातु, दीर्घ शब्द वाली राशि है। यह काल पुरुष की बाहु है। इसका स्वामी बुध है।

कर्क– कक्र का अर्थ है। केकड़ा। अंग्रेजी में इसे(ब।छब्म्त) कहते हैं। यह 90^0 अंश से 120^0 अंश तक है। पुनर्वसु का एक चरण, पुष्य के 4 चरण और आश्लेषा के चार चरण मिल कर यह राशि बनी है। इसे कक्रट, चतुर्थ, और कुलीर भी होते कहते हैं। यह सम, सौम्य, रात्रिबली, स्थान–जल भू, उत्तर दिशा की स्वामिनी, स्त्रिग्ध–कान्ति, विप्र जाति, पृष्ठोदयी, स्त्री, चर, मृदु, सम, जलचर, जल तत्त्व, अपद, गुलाबी रंग, शीत गुण, कफ धातु, हीन शब्द वाली राशि है। यह काल पुरुष का वक्ष है। इसका स्वामी चंद्रमा है।

सिंह– सिंह राशि का अर्थ है शेर। अंग्रेजी में इसे (स्म्व) कहते हैं। यह 120^0 अंश से 150^0 अंश तक है। मघा के चार चरण, पूर्वा फाल्गुनी के चार चरण और उत्तरा फाल्गुनी के एक चरण से मिलकर बनी है। इसके अन्य नाम मृगेन्द्र, पंचम, कंठीरव और लेय हैं। यह विषम, उग्र, दिवाबली, स्थान–गिरि भू, पूर्व दिशा, स्थिर दृढ़, दीर्घ, पशु राशि, शुष्क, अग्नि तत्त्व, चतुष्पद, धूम्रवर्ण, उष्ण, पित्त धातु, दीर्घ शब्द वाली राशि है। यह काल पुरुष का ह्रदय है। इसका स्वामी सूर्य है।

कन्या– कन्या का अर्थ है। अविवाहित बालिका। इसे अंग्रेजी में (टप्त्ळव) कहते हैं। यह 150^0 अंश से 180^0 अंश तक है। उत्तरा फाल्गुनी के तीन चरण, हस्त के चार चरण, और चित्रा नक्षत्र के दो चरण से मिलकर यह राशि बनी है। इसके अन्य नाम स्त्री, तरुण, षष्ठ और पाद्योन हैं। यह सम, सौम्य, रात्रिबली, स्थान शुभ भूमि, दक्षिण दिशा की स्वामिनी, रुक्ष, वैश्य जाति, शीर्षोदयी, स्त्री, द्विस्वभाव, कृष, दीर्घ, मनुष्य राशि, शुष्क, पृथ्वी तत्त्व, द्विपद, वर्ण पीला, गुण–शीत, धातु वायु, अर्द्ध शब्द वाली राशि है। यह काल पुरुष का उदर है। इसका स्वामी बुध है।

तुला– तुला तराजू को कहते हैं। अंग्रेजी में इसे(स्पठत।) कहते हैं। यह 180^0 अंश से 210^0 अंश तक है। चित्रा के दो चरण, स्वाती के चार चरण और विशाखा नक्षत्र के तीन चरणों से मिलकर यह राशि बनी है। इसके अन्य नाम पथ, तौलि, तूल, वणिक, घट, सप्तम, जूक हैं। यह विषम, उग्र, दिवाबली, स्थान वन भू, पश्चिम दिशा की स्वामी, स्निग्ध, शूद्र जाति, शीर्षोदयी पुरुष, चर, दृढ़, दीर्घ, मनुष्य राशि, जल, वायुतत्त्व, द्विपद, वर्ण विचित्र, गुण उष्ण, धातु सम, हीन शब्द वाली राशि है। यह काल पुरुष का वस्ति है। इनका स्वामी शुक्र है।

वृश्चिक–वृश्चिक का अर्थ है। बिच्छू। अंग्रेजी में इसे (ब्ल्त्च्व) कहते हैं। इसकी स्थिति आकाश में 210^0 से 240^0 अंश तक है। विशाखा का चतुर्थ चरण, अनुराधा के चार चरण और ज्येष्ठा के चार चरण से मिलकर यह राशि बनी है। इसके अन्य नाम कीट, सरीसृप, अलि, अष्टम और कौर्प्य हैं। यह सम, सौम्य, रात्रि बली, स्थान सम भू, उत्तर दिशा की स्वामी, कान्ति स्त्रिग्ध, विप्र जाति, शीर्षोदयी, स्त्री, स्थिर, कृश, दीर्घ कीट राशि, जलीय, जल तत्त्व, बहुपद, वर्ण श्वेत, गुण शीत, धातु कफ, शब्द हीन राशि है। यह काल पुरुष का गुप्तांग है। इसका स्वामी मंगल है।

धनु–धनु का अर्थ है धनुष। इसका आधा अंग नर का और आधा अंग पशु का है। इसे अंग्रेजी में (।ळप्ज्ज।त्प्वै) कहते हैं। इसका विस्तार 240^0 अंशा से 270^0 अंश तक है। मूल के चार चरण, पूर्वाषाढ़ा के चार चरण और उत्तराषाढ़ा के प्रथम चरण से मिलकर यह राशि बनी है। इसके अन्य नाम धन्वी, चाप, शरासन, हय, तौक्षिक, जव, शरधर और नवम् हैं। यह विषम, उग्र, दिवाबली, स्थान गिरिभू, पूर्व दिशा की सवामी, रुक्ष कान्ति, क्षत्रिय जाति, पृष्ठोदयी, पुरुष राशि, द्विस्वभाव, दृढ़ सम, नर–पशु, शुष्क, अग्नि

तत्त्व, द्विपद, स्वर्ण वर्ण, उष्ण गुण, पित्त धातु, अति शब्दावली राशि है। यह काल पुरुष की जंघा है। इसका स्वामी गुरु है।

मकर– मकर एक जलीय जंतु है जिसे मगर भी कहते हैं। अंग्रेजी में इसे (ब।च्त्प्ब्व्त्छ) कहते हैं। इसका विस्तार 270^0 अंश से 300^0 अंश तक है। उत्तराषाढ़ा के तीन चरण, श्रवण के चार और घनिष्ठा के दो चरण से मिलकर यह राशि बनी है। इसके अन्य नाम मृगास्य, मृग, नक्र, कुरंग, आकोकेरो और दशम हैं। यह सौम्य, सम, रात्रिबली, स्थान वनभू, दक्षिण दिशा की स्वामी, रुक्ष कान्ति, वैश्य वर्ण, पृष्ठोदयी, वर्ण पीला, गुणशीत, धातु वायु, अति शब्द वाली राशि है। यह काल पुरुष का घुटना है। इसका स्वामी शनि है।

कुम्भ– कुम्भ घड़े को कहते हैं। अंग्रेजी में इसे (।फन्।त्प्ै) कहते हैं। यह 300^0 अंश से 330^0 अंश तक स्थित है। धनिष्ठा के दो चरण, शत्भिषा के चार चरण और पूर्वाभाद्रपद के तीन चरण से यह राशि बनी है। इसके अन्य नाम घट, एकादश हैं। यह विषम, उग्र दिवा, बली, स्थान समभू, पश्चिम दिशा की स्वामी, स्त्रिग्ध कान्ति, शूद्र जाति, शीर्षोदयी, पुरुष राशि, स्थिर दृढ़, लघु जलधर, जलवायु तत्त्व, अपद, वर्ण हरा गुण ऊष्ण, धातु सम, शब्द फूटा वाली राशि है। यह काल पुरुष की पिण्डली है। इसका स्वामी शनि है।

मीन– मीन मछली को कहते हैं। इसे अंग्रेजी में (च्प्ब्म्ै) कहते हैं। यह 330^0 से 360^0 अंश तक स्थित है। पूर्वा भाद्रपद का चतुर्थ चरण, उत्तरा भाद्रपद के चार चरण तथा रेवती नक्षत्र के चार चरण से मिलकर यह राशि बनी है। इसके अन्य नाम मत्स्य, अन्त्य, द्वादश, पृथरोमा, झष, जलचर, मीन, अलि हैं। यह सम सौम्य, रात्रिबली, स्थान जलभू, उत्तर दिशा की स्वामी, स्त्रिग्ध, विप्र जाति, उभयोदयी, स्त्री, द्विस्वभाव, दृढ़, लघु जलचर, जल तत्त्व, अपद, धूम्रवर्ण, गुण शीत, धातु कफ, हीन शब्द वाली राशि है। यह काल पुरुष के चरण हैं। इसका स्वामी गुरु है।

4.6 ग्रह एवं राशियों का पारस्परिक सम्बन्ध

सौर जगत में प्रधानता सूर्य की है। इसलिए सूर्य को ग्रहों में राजा का एवं कालपुरुष के शरीर में आत्मा का कारक माना गया है। फलस्वरूप शरीररूपी रथ का वाहक सूर्य है ऐसा माना गया है। सूर्य के विहीन अथवा आत्मा रहित शरीर केवल पृथ्वी तत्त्व तक सीमित है। अतः जिस प्रकार से शरीर में आत्मा के रूप में सूर्य अवस्थित है ठीक उसी प्रकार से सौर जगत में पंच ताराग्रह भौम, बुध, गुरु, शुक्र, शनि आदि सभी पंच तारा ग्रह सूर्य के तेज से प्रकाशित होकर प्रतिबिम्बित प्रकाश पृथ्वी वासियों को देकर स्व–स्व गुण–दोष धर्मानुसार जातक के मन, बल, बुद्धि, वाणी, भौतिक सुख एवं ससाधनादि के कारक बनते हैं। प्रकार से इस भूमण्डलस्थ प्रत्येक जीव जन्तु, का सम्बन्ध आन्तरिक एवं बाह्य दोनों प्रकार से इन ग्रहों से है। यहाँ आचार्य कालपुरुष का सम्बन्ध ग्रहों से स्थापित करते हुए कहते हैं कि–

''कालात्मा दिनकृन्मनश्च हिमगुः सत्त्वं कुजो ज्ञो वचो
जीवो ज्ञानसुखे सितश्च मदनो दुःखं दिनेशात्मजः।
राजानौ रविशीतगू क्षितिसुतौ नेताकुमारो बुधः
सूरिर्दानवपूजितश्च सचिवः प्रेष्यः सहस्रांशुजः।।

उपर्युक्त में आचार्य वराहमिहिर ग्रहों का कालपुरुष के साथ सम्बन्ध करते हुए कहते हैं कि सूर्य स्वयं कालपुरुष की आत्मा है और मन चन्द्रमा, कालपुरुष के शरीर में स्थित बल भौम ग्रह है, वाणी जो हम परस्पर आचार–व्यवहार एवं वार्तालाप के माध्यम से

विचारों का आदान–प्रदान का कारक ग्रह बुध है। आध्यात्मिक ज्ञान का कारक ग्रह भूत–भविष्य–वर्तमान कालादि में शुभाशुभ समय का एवं कार्यादि का सूचक ग्रह बृहस्पति है। सांसारिक भौतिक वाहन, वस्त्र, आभूषणादि काल पुरुष के भौतिक संसाधनों का कारक ग्रह शुक्र ग्रह है। कालपुरुष में दुःख की अनुभूति शनि ग्रह करवाते हैं। इसलिए कालपुरुष एवं ग्रहों का पारस्परिक सम्बन्ध से ही संसार गतिमान है। अन्यथा संसार की कल्पना करना असम्भव है। **'यत्पिण्डे तत् ब्रह्माण्डे'** का वैदिक उद्घोष वाक्य आपको बार–बार ब्रह्माण्डस्थ समस्त पिण्डों एवं स्वयं के अन्तर्भूत स्थिति पृथ्वी, जल, तेज, वायु, आकाश के विषय से इंगित करवाता है। अतः यह कहना अतिशयोक्ति नहीं होगी कि ब्रह्माण्डस्थ समस्त पिण्डों का सम्बन्ध हमारे शरीर से नहीं है।

राशियाँ– ठीक इसी प्रकार से राशियाँ भी आकाश में छोटे लघु पिण्डों का एक समूह विद्यमान है। जो कि 360^0 अंशो में स्थित नाड़ी चक्र, भचक्र, राशिचक्र इत्यादि विभिन्न नामों से जानी जाती है। जिस प्रकार से ग्रह भूमण्डलस्थ समस्त जड़–चेतन को अपनी गति–स्थिति एवं प्रकृति के द्वारा प्रभावित करते हैं, ठीक उसी प्रकार से राशियों का भी अपना एक स्थान है, एक प्रभाव है। यही प्रभाव जब ग्रहों में संयोग वश राशियों की बलवत्ता को बढा कर ग्रह एवं राशियों के गुण–दोषानुसार प्रत्येक जातक की भिन्न–भिन्न ग्रह स्थिति वशात्, प्रत्येक जातक की भिन्न–भिन्न राशि वशात्, प्रत्येक जातक का भिन्न–भिन्न नक्षत्रवशात्, प्रत्येक जातक का भिन्न–भिन्न नक्षत्र चरण वशात्, भिन्न–भिन्न प्रभाववशात् पृथक् पृथक् काल में जन्म लेने वाले समस्त भूमण्डलस्थ प्रत्येक जातक की कुण्डलीस्थ ग्रहों के योगानुसार शुभाशुभ फल की प्राप्ति उस कुण्डलीस्थ जातक की ग्रह राशि प्रभाव वशात् बनने वाले योग जन्म–जन्मान्तर कृत् शुभाशुभ कर्म द्वारा प्राप्त योगानुसार फल की प्राप्ति होती है। अतः यह कहना उचित होगा कि ग्रह और राशियों का पारस्परिक सम्बन्ध वशात् ही ज्योतिषशास्त्र का महत्त्व है। चूँकि राशि प्रत्येक जातक की कुण्डली में मन की स्थिति का दर्शन करवाती है और उस राशि का स्वामी ग्रह अपने गुण–दोषानुसार उस जातक का नेतृत्त्व करता है। और यही पारस्परिक सम्बन्ध जातक को भूत–भविष्य एवं वर्तमान की स्थिति से अवगत कराते हुए हमें हमारे द्वारा पूर्वार्जित कर्मानुसार फल प्रदान करते हैं। यथा–

4.7 सारांश

जीव की उत्पत्ति एवं उस पर होने वाले प्रभाव में नक्षत्र, ग्रह एवं राशियों की अहम् भूमिका है। इसलिए मनुष्यों जन्तुओं एवं वनरचतियों निश्चित रूप से संयोग होना और उन परमाणुओं का सूर्यादि पिण्डों के साथ सम्बन्ध वशात् स्वाभाविक है कि इन पिण्डों का मानव देह के साथ सीधा–सीधा और साक्षात् सम्बन्ध है इसलिए प्रत्येक नक्षत्र, राशि का परस्पर संयोग तथा ग्रहों के साथ सम्बन्ध नेतृत्त्व होने के कारण मानव जगत को प्रभावित कर रहा है। इस प्रभाव को आपने इस इकाई में जाना जिसे अन्य ज्योषित ग्रन्थों में आप और भी विस्तार से पढ़ सकते हैं।

4.8 शब्दावली

चक्षुसी = दोनों नेत्र या चक्षु।

श्रोत्र = कर्ण

कल्प = सृष्टि के आरम्भ से अवसान तक का काल

पादपद्मद्वयम् = दोनों पैर।

श्रौतस्मार्त = श्रुति एवं स्मृतिपरक क्रियाएँ

स्कन्धत्रयम् = तीन स्कन्ध या भाग सिद्धान्त, संहिता एवं होरा।

कालाश्रयेण = काल के अधीन होने से

क्रतुक्रियार्थम् = यज्ञ विधान की क्रिया में।

षड्धा = छः प्रकार

टाहुः = कहे गए।

संक्रान्ति = सूर्य के द्वारा राशि में प्रवेश की घटना

अप्रत्यक्षाणि = जो प्रत्यक्ष नहीं है।

चन्द्राऽर्कौ = चन्द्र और सूर्य।

अनुभूतिप्रदम् = अनुमान प्रद।

नागानाम् = सर्पों का (सम्बन्ध)

मणयोः = मणियाँ

मधुपिंगलदृक् = शहद के समान पिंगल वर्ण वाले नेत्रों से युक्त।

चतुरस्रतनुः = चौकोर शरीर धारी।

पित्तप्रकृति = पित्त प्रकृति वाले।

अल्पकचः = कम केशों वाले।

बहुवातकफः = अत्यधिक वात एवं कफ वाला

4.9 अभ्यास प्रश्न

1. नक्षत्र किसे कहते हैं? नक्षत्रों का सामान्य जीवन पर क्या प्रभाव पड़ता है?
2. राशियाँ कितनी हैं? सामान्य जीवन में उपयोगिता सिद्ध करें।
3. राशि और नक्षत्रों का परस्पर योगदान सामान्य जीवन को कैसे प्रभावित करता है?
4. ग्रह किसे कहते हैं? ग्रहों का भूमण्डलस्थ प्राणियों पर क्या प्रभाव पड़ता है? स्पष्ट करें।

4.10 उपयोगी पुस्तकें

1. भारतीय ज्योतिष, नेमिचन्द्रशास्त्री, भारतीय ज्ञानपीठ, प्रकाशन नई दिल्ली।
2. भारतीय कुण्डली विज्ञान, मीठालाल हिम्मतराम ओझा, देवर्षि प्रकाशन वाराणसी, प्रकाशन वर्ष–2008
3. वृहत्पारासरहोराशास्त्रम्, चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन वाराणसी, टीकाकार, पद्मनाभशर्मा, प्रकाशन वर्ष 2012
4. जातकपारिजात, वैद्यनाथ, व्याख्याकार डॉ. हरिशंकर पाठक, प्रकाशन वर्ष 2012, चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन वाराणसी।
5. भारतीय ज्योतिष विज्ञान, डॉ. सुरकान्त झा, चौखम्बा कृष्णदास अकादमी, वाराणसी।
6. लघुपारासरी सिद्धान्त भाष्य, डॉ रत्नलाल, सत्यम् पब्लिकेशन, नई दिल्ली।
7. बृहद्वकहोडाचक्रम्, डॉ. रत्नलाल, सत्यम् पब्लिकेशन, नई दिल्ली।
8. जातकालंकार, सद्मनसेश्वरी व्याख्या सहित, डॉ. रत्नलाल, सत्यम् पब्लिकेशन, नई दिल्ली।